2 दिसम्बर 2014, कुल पृष्ठ : 8, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. P. C / FN-32 / 2012-14

जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के व्याख्यान प्रतिदिन अब आधे घंटे

जी-जागरण पर

प्रतिदिन प्रातः 6.30 से 7.00 बजे तक

वर्ष : 37, अंक : 17 सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** आजीवन शुल्क : 251 रुपये

दिसम्बर (प्रथम), 2014 (वीर नि. संवत्-2541) सह-सम्पादक : **डॉ. संजीवकुमार गोधा व पण्डित परमात्मप्रकाश भारिल्ल** वार्षिक शुल्क : 25 रुपये

सिद्धचक्र विधान सानन्द संपन्न

गजपंथ-नासिक (महा.) : यहाँ अष्टाह्निका महापर्व के अवसर पर दिनांक 30 अक्टूबर से 6 नवम्बर तक श्री सिद्धचक्र महामण्डल विधान का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के सी.डी. प्रवचनों के अतिरिक्त ब्र. सुनीलजी शिवपुरी द्वारा समयसार एवं नियमसार पर प्रवचनों का लाभ मिला। दोपहर में ब्र. धन्यकुमारजी द्वारा प्रौढकक्षा का लाभ मिला। सायंकाल पण्डित अंकितजी शास्त्री खड़ैरी व पण्डित विपिनजी शास्त्री बांसवाड़ा द्वारा बाल कक्षा ली गई।

कार्यक्रम में मुम्बई, पूना, सोलापुर, पँढरपुर, डसाला, चिकली, मलकापुर, हिंगोली, औरंगाबाद आदि स्थानों से 150 साधर्मियों ने पधारकर तत्त्वज्ञान का लाभ लिया।

विधि-विधान के समस्त कार्य पण्डित अशोकजी उज्जैन एवं पण्डित रमेशजी इन्दौर द्वारा संपन्न हुये। संपूर्ण कार्यक्रम का निर्देशन एवं विधान के अष्टक व जयमालाओं का अर्थ ब्र. जतीशचंदजी शास्त्री दिल्ली ने स्पष्ट किया।

साप्ताहिक गोष्ठी संपन्न

जयपुर (राज) : यहाँ टोडरमल स्मारक भवन में साप्ताहिक गोष्ठियों की श्रृंखला में दिनांक 16 नवम्बर को **'गुणस्थान : एक अनुशीलन'** विषय पर शास्त्री वर्ग की एक गोष्ठी का आयोजन किया गया।

इस गोष्ठी की अध्यक्षता श्री बसंतभाई दोशी मुम्बई ने की। मुख्य अतिथि के रूप में श्री महिपालजी ज्ञायक बांसवाड़ा एवं ब्र. यशपालजी जैन जयपुर उपस्थित थे। श्रेष्ठ वक्ता के रूप में अनुभव जैन (शास्त्री प्रथम वर्ष) एवं अनुभूति जैन (शास्त्री द्वितीय वर्ष) रहे। मंगलाचरण कु. वर्षा जैन दिल्ली (उपाध्याय कनिष्ठ) ने किया।

गोष्ठी का संचालन ब्रजेन्द्र जैन एवं हेमचन्द्र जैन (शास्त्री तृतीय वर्ष) ने किया। आभार प्रदर्शन पण्डित सोनूजी शास्त्री ने किया।

पूज्य गुरुदेवश्री कानजीस्वामी के समस्त ऑडियो - वीडियो, प्रवचन साहित्य एवं अन्य अनेक जानकारियों के लिये अवश्य देखें-
वेबसाईट - www.vitragvani.com
संपर्क सूत्र-श्री कुन्दकुन्द कहान पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई
Ph. : 022-26130820, 26104912, E-Mail - info@vitragvani.com

ब्र. यशपालजी द्वारा तत्त्वप्रचार

भोपाल (म.प्र.) : यहाँ चौक मंदिर के सभागृह में दिनांक 24 अक्टूबर से 2 नवम्बर तक प्रातःकाल पहले से तीसरे गुणस्थान विषय पर कक्षाओं का लाभ मिला। सायंकाल चौक मंदिर के सामने नूतन समवशरण मंदिर में भी कक्षाओं का लाभ मिला।

दिनांक 12 व 13 नवम्बर को कर्म की बंध सत्ता अवस्था विषय पर कक्षाओं का लाभ मिला। सभी साधर्मियों ने रुचिपूर्वक कक्षाओं का लाभ लिया एवं पुनः आने की भावना व्यक्त की।

कारंजा (महा.) : यहाँ महावीर ब्रह्मचर्याश्रम के विद्यार्थियों एवं कार्यकर्ताओं में धर्मरुचि जागृत करने हेतु दिनांक 4 से 10 नवम्बर तक प्रवचनों का लाभ मिला।

क्या आप फैडरेशन के माध्यम से तत्त्वप्रचार की गतिविधियों में जुड़ना चाहते हैं ?

यदि हाँ, तो हमसे सम्पर्क करें -
कृपया अपने बारे में निम्नलिखित जानकारी उपलब्ध करवाएं -
नाम - .....
मोबा. नं. .....ई-मेल : .....
पिता का नाम - .....मोबा. नं. .....
पता - .....

संपर्क सूत्र - महामंत्री-अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-4, बापूनगर, जयपुर-302015
E-mail : abjyff@gmail.com; Ph. : 07727999944

क्या आप भी किसी के आत्मकल्याण में निमित्त बनना चाहते हैं ?

फैडरेशन की ''आवो मारी साथे'' योजना अपनाएँ

कम से कम एक व्यक्ति को आत्मकल्याण के मार्ग पर लायें !!
अधिक जानकारी के लिए हमसे संपर्क करें -
महामंत्री - अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन

सम्पादकीय –

जयजिनेन्द्र क्यों ? गुडमॉर्निंग क्यों नहीं ?

– पण्डित रतनचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे...)

परन्तु वे विवश थे। इसके सिवाय उस समय और करते भी क्या ? घर में विज्ञान को संभालने के लिए उसकी माँ भी नहीं थी और अकेले होने के कारण उनके पास उसकी देखभाल करने का समय भी नहीं था; अत: घर में रखकर पढाना-लिखाना तो संभव था नहीं और नगर में अन्य लोग भी उत्तम व्यवस्था और उत्तम पढाई की दृष्टि से उसी शिक्षा संस्थान की प्रशंसा किया करते थे और विज्ञान को उसी में प्रविष्ट कराने का परामर्श दिया करते थे, इसकारण ऐसा बनाव बन गया था।

पर उन्होंने इस सम्बन्ध में विज्ञान से कुछ नहीं कहा, कहते भी क्या ? उसमें उस बेचारे का दोष भी क्या था ? उसे तो जैसा वातावरण मिला, वैसा ढल गया।

जो होना था सो तो हो ही गया; पर उन्होंने इस घटना से प्रेरणा पाकर यह संकल्प किया कि यदि मैं थोड़े दिन और जीवित रहा तो मैं इस शिक्षा संस्थान के समानान्तर ही एक ऐसा आदर्श शिक्षा संस्थान स्थापित करूँगा, जिसमें आधुनिक संदर्भ में सभी प्रकार की सर्वश्रेष्ठ लौकिक शिक्षा के साथ भारतीय सभ्यता, श्रमण-संस्कृति, नैतिक शिक्षा और अहिंसक सदाचारी जीवन जीने की कला में छात्रों को निपुण किया जाएगा और वीतराग-विज्ञान की महिमा से छात्रों को परिचित कराया जायेगा।

इसके लिए उन्होंने प्रोफेसर ज्ञान के पिता श्री अरहंत जैन, जो स्वयं एक अनुभवी शिक्षाविद् थे, को बुलाया और उन्हें अपने विचारों से अवगत कराते हुए परामर्श दिया।

वे भी वर्तमान शिक्षा के दोषों को दूर करना चाहते थे, पर अभी तक वे यह सोचकर पीछे हट जाते थे कि अकेला एक चना भाड़ नहीं फोड़ सकता। अत: चुप रहने में ही सार है।

परन्तु अब जब उन्हें एक श्रीमंत का सहारा मिला तो उनका उत्साह तो दस गुणा बढा ही, साहस भी बढ गया और उन्होंने इस दिशा में सोचना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने सेठ लक्ष्मीकांत को आश्वस्त किया कि मैं तीन माह के अन्दर ही उन्हें इस विषय की आद्योपांत लिखित रूपरेखा प्रस्तुत कर दूँगा।

सेठ लक्ष्मीकांत ने श्री अरहंत जैन से मनोवांछित रूपरेखा पाते ही एक करोड़ रुपये देने की घोषणा करके अपने संकल्प के अनुसार शिक्षा केन्द्र को साकार रूप तो दे दिया, पर वे उसे फूलता-फलता नहीं देख पाये। उनके मरणोपरान्त श्री अरहंत जैन के निर्देशन में वह नव संस्थापित आदर्श शिक्षा संस्थान प्रारम्भ में एक दशक तक तो अपने उद्देश्यों की ओर अग्रसर रहा, पर उनकी भी आँखें बन्द होते ही उसकी व्यवस्था कुछ ऐसे हाथों में पहुँच गई, जिन्हें धर्म और संस्कृति से तो कोई लगाव था ही नहीं, सामान्य शिक्षा व्यवस्था को सुचारु रीति से चलाने का अनुभव भी नहीं था। इस कारण अब वह शिक्षा संस्थान केवल राजनैतिक चर्चा-वार्ता और अध्यापकों की आजीविका का साधन मात्र बनकर रह गया था।

पिता के दिवंगत हो जाने से अनायास ही विज्ञान के कोमल कंधों पर सम्पूर्ण उद्योग-व्यापार और घर-बाहर का बोझ आ गया था। इस कारण बहुत दिनों तक तो वह कहीं आ-जा भी नहीं सका और उसका किसी से मिलना-जुलना भी नहीं हो पाया था। पर उसने अपनी चतुराई और दूरदर्शिता से व्यापार को कुछ इसतरह से संभाला और ऐसा व्यवस्थित किया कि उसकी आर्थिक आय पर विपरीत प्रभाव भी न पड़ा और अधिक व्यवस्था भी न रही।

विज्ञान अपनी पढाई पूरी करके जब से होस्टल से वापिस घर आया है, तब से अब तक वह अनेक लोगों के मुँह से ज्ञान और सुदर्शन की कार्य-शैली की काफी कुछ प्रशंसा सुन चुका था।

इतना तो उसे भी ज्ञात था कि उन दोनों ने अपने घर पर रहकर ही अपने नगर के उस शासकीय विद्यालय में आद्योपांत शिक्षा प्राप्त की है, जहाँ पढाई के नाम पर इकट्ठे होने वाले छात्र-छात्राओं में तो अधिकांश परस्पर एक-दूसरे के सच्चे-झूठे प्रेम-प्रसंगों के ही चर्चे हुआ करते और अध्यापक लोग राजनीति एवं राजनेताओं पर कपोल-कल्पित टीका-टिप्पणियाँ किया करते।

इन परिस्थितियों में भी वे दोनों अपने परिश्रम के बल पर बोर्ड एवं विश्वविद्यालय की प्रत्येक परीक्षा में लगभग पहला-दूसरा स्थान ही पाते रहे। ज्ञान एम.ए., पीएच.डी. करके प्रोफेसर हो गया है और सुदर्शन एल.एल.बी. करके वकील बन गया है।

व्यवसाय के क्षेत्र में वे चले तो अपने-अपने पिता के पद-चिन्हों पर ही, पर कार्य-शैली में वे उनसे बिलकुल भिन्न तरीके से आगे बढ रहे थे। उनकी नवीन कार्य-शैली की नगर में सर्वत्र चर्चा थी।

अत: विज्ञान की उनसे मिलने की इच्छा प्रबल हो उठी थी, पर कार्य की व्यस्तता के कारण अभी तक वह उनसे मिल नहीं पाया था।

एक दिन अपने व्यस्त कार्यक्रम में से समय निकालकर विज्ञान

अपने बालसखा प्रो. ज्ञान से मिलने उसके घर गया। उससे मिलते ही हाथ मिलाने के लिए अपना हाथ आगे बढाते हुए विज्ञान ने कहा – ''गुडमॉर्निंग मि. ज्ञान !''

ज्ञान ने विज्ञान के द्वारा किए गये गुडमॉर्निंग को अनसुना कर बात बदलने की नियत से कहा – ''ओ हो ! विज्ञान तुम ! --- यहाँ ---! अचानक कैसे याद आ गई कृष्ण कन्हैया को सुदामा की यह कुटिया ? जब से तुम पढकर लौटे, तब से तो ईद के चाँद ही हो रहे हो, कभी दिखते ही नहीं, किस दुनिया में रहते हो आजकल ?''

विज्ञान ने भी ज्ञान की औपचारिकता का उत्तर देना आवश्यक न मानते हुए पुन: कुछ जोर से कहा – ''गुडमॉर्निंग मि. ज्ञान !''

ज्ञान ने विस्मय भाव से कहा, ''क्या कहा ? गुडमॉर्निंग ! मित्र गुडमॉर्निंग नहीं, जयजिनेन्द्र कहो जयजिनेन्द्र।''

''क्यों भाई ज्ञान ! जयजिनेन्द्र क्यों ? गुडमॉर्निंग क्यों नहीं?'' विज्ञान ने जिज्ञासा प्रकट की।

ज्ञान ने समाधान किया – ''हम जैन हैं न !''

विज्ञान ने कहा – ''यह तो मैं भी जानता हूँ कि हम जैन हैं, पर क्या जैनों को जयजिनेन्द्र करना ही जरूरी है ? क्या हम गुडमॉर्निंग नहीं कर सकते हैं ?''

ज्ञान ने समझाया – ''अरे भाई ! वैसे तो सब स्वतंत्र हैं, सभी अपनी–अपनी मर्जी के मालिक हैं। जो जिसके जी में आये करे। कौन किसको रोक सकता है। पर हमारे उपास्य देव तो जिनेन्द्र भगवान ही हैं न ? अत: हमारे लिए तो वे ही प्रात:स्मरणीय हैं। इसलिए हम प्रात: सर्वप्रथम अपने उपास्य देव – जिनेन्द्र देव का स्मरण करने के लिए जयजिनेन्द्र करते हैं और करना चाहिए।

देखो न ! प्रत्येक रामभक्त 'जय रामजी' करता है या नहीं ? प्रत्येक खुदाभक्त 'खुदाहाफिज' कहता है या नहीं ? प्रत्येक गुरुभक्त 'जयगुरुदेव' कहता है या नहीं ? प्रत्येक हिन्द प्रेमी 'जयहिन्द' कहता है या नहीं ?

जब सर्वत्र ऐसा है तो तुम्ही सोचो – प्रत्येक जिनेन्द्र भक्त को जयजिनेन्द्र करना चाहिए या नहीं ?''

विज्ञान ने कहा – ''यह सब तो ठीक है, पर इस सब में एक तो साम्प्रदायिकता की गंध आती है दूसरे ये अभिवादन पुरातनपन्थी से लगते हैं, अत: अटपटे भी लगते हैं तथा 'गुडमॉर्निंग' एक कोमल शब्द है, इससे किसी धर्म या सम्प्रदाय विशेष का सम्बन्ध भी नहीं है। अत: मुझे तो 'गुडमॉर्निंग' अभिवादन ही अच्छा लगता है।''

ज्ञान ने पुन: समझाने का प्रयत्न किया – ''देख भाई ! अच्छा–बुरा तो संस्कारों पर निर्भर करता है। तुझे पूरे पन्द्रह वर्ष उसी वातावरण में रहते–रहते वैसी ही आदत पड़ गई है और तू भारतीय संस्कृति से अच्छी तरह परिचित भी नहीं है, अत: अच्छे लगने की तो बात अलग है, पर यदि तू तर्क–युक्ति से विचार करेगा तो तुझे स्वयं अपनी कमजोरी का पता चल जायेगा।

मैं पूछता हूँ '' यदि तुझे भारतीय अभिवादनों में साम्प्रदायि और पुरातन पन्थ की गंध आती है तो क्या गुडमॉर्निंग में पाश्चात्य संस्कृति व आधुनिक सभ्यता की गंध नहीं है ? और क्या पाश्चात्य संस्कृति में कोई धार्मिक विचारों को स्थान नहीं है ?

अरे भाई ! सभी वर्गों में अपने–अपने धर्म हैं, दर्शन हैं, उनके अपने सिद्धांत हैं, अपने–अपने इष्टदेव हैं, जिन्हें वे प्रात: स्मरणीय मानते हैं और अभिवादन के रूप में स्मरण भी करते हैं।

क्या हम 'जयजिनेन्द्र' जैसे अपने प्रसिद्ध अभिवादन की उपेक्षा करके दुनिया की दृष्टि में सिद्धान्तविहीन साबित नहीं होंगे ? हमें 'जयजिनेन्द्र' करने में संकोच नहीं होना चाहिए। हमें अपने उपास्य देव को छोड़ अन्य कुछ बोलकर हर एक के सामने गिरगिट की तरह रंग भी नहीं बदलना चाहिए। कोई हम से कुछ भी बोलकर अभिवादन करे, पर हम तो उसके उत्तर में जयजिनेन्द्र ही कहें।''

विज्ञान ने जानने की जिज्ञासा से कहा –''राम, कृष्ण आदि तो ऐतिहासिक महापुरुष हुए हैं और हिन्दू संस्कृति में इन्हें ईश्वरीय अवतार भी माना गया है, पर यह जिनेन्द्र कौन हैं ? जिसकी हम जय बोलते हैं; यह मेरी समझ में आज तक नहीं आया।''

ज्ञान ने कहा – ''जिन्होंने मोह–राग–द्वेष और इन्द्रियों के विषयों पर विजय प्राप्त कर ली है, जो पूर्ण वीतरागी और सर्वज्ञ हो गये हैं, वे सब आत्माएं जिनेन्द्र हैं।'' जैनधर्म में भी ऋषभदेव से महावीर तक चौबीस तीर्थंकर ऐसे ही जिनेन्द्र हैं जो ऐतिहासिक महापुरुष के रूप में भी मान्य हैं। उनके स्मरण करने से उनसे प्रेरणा पाकर हम भी उन जैसे बन सकते हैं, इसलिए जैन संस्कृति में 'जयजिनेन्द्र' बोलने की परम्परा है।

विज्ञान ने कहा – ''ज्ञान ! तुम्हारा प्रस्तुतीकरण तो बहुत ही बढिया है। क्यों नहीं होगा, प्रोफेसर जो ठहरे। पर सवेरे–सवेरे तुम यह क्या राग छेड़ बैठे हो ? जिससे साम्प्रदायिकता पनपे, ऐसी बात ही क्यों करना ?''

ज्ञान ने दृढता से कहा – ''नहीं विज्ञान ! धर्म और दर्शन के सिद्धान्तों से कभी साम्प्रदायिकता नहीं पनपती। फिर यह भारत तो ऐसा बगीचा है, जिसमें विभिन्न धर्म और दर्शन के रंग–बिरंगे फूल खिलते हैं और सभी अपनी–अपनी पसंद के अनुसार उनकी सौरभ से सुरभित होते हैं। **(क्रमश:)**

धर्म क्या, क्यों, कैसे और किसके लिए -

– परमात्मप्रकाश भारिल्ल

धर्म दुनिया में सर्वोत्कृष्ट है।

धर्म, धर्म की क्रिया, धार्मिक आचरण और व्यवहार तथा धार्मिक जीवन ही आदर्श हैं, सर्वोत्कृष्ट हैं, कल्याणकारी हैं, सुख हैं, सुखी करने वाले हैं और मोक्ष का मार्ग है।

उक्त तथ्य के बावजूद धर्म के उद्देश्य, स्वरूप, क्रिया और परिणाम के बारे में हम अन्धकार और भ्रम में ही हैं। हम नहीं जानते हैं कि धर्म क्या, क्यों, कैसे और किसके लिए ?

अपने कल्याण के लिए उक्त स्पष्ट समझ अपरिहार्य है।

क्रमशः कई किश्तों में प्रकाशित होने वाले इस लेख में हम उक्त सभी पहलुओं पर गंभीर चिंतन करेंगे।

हमारी वर्तमान दशा –

हममें से बहुत से (अधिकतम) लोग भ्रम के साथ जीते हैं, अपने आपको धर्मात्मा मानते हैं, पर यदि तनिक गहराई से विचार किया जाए तो हम पायेंगे कि ***सचमुच हम धर्मात्मा नहीं, सिर्फ धर्मभीरू हैं।***

धर्म और धार्मिक आचरण हमारी चाहत नहीं आशा, आकांक्षा, लोभ और भय से प्रेरित मजबूरी है।

धर्मात्मा तो दूर हम पुजारी भी नहीं, हम तो सौदागर हैं।

सौदागर भी ईमानदार नहीं बेइमान।

हमें न्याय नहीं चाहिए, न्याय से भी कुछ नहीं चाहिए, सही समय और स्थान पर पूरी और उचित कीमत चुकाकर भी हमें कुछ नहीं पाना है, हमें तो समय से पहिले बिना उचित कीमत चुकाए, दूसरों का हक छीनकर और उन्हें नुकसान पहुंचाकर सब कुछ पाना है, धन–दौलत, शक्ति और स्वास्थ्य, सत्ता और शोहरत, घर–परिवार, इष्टजन–परिजन, सहयोगी और सेवक।

उक्त सभी वस्तुओं को अर्जित करने के अनेक संभावित साधनों में से हमारी नजर में कथित धर्म भी एक संभावित साधन हो सकता है, हालांकि जिसपर न तो पूरी तरह भरोसा ही किया जा सकता है और न ही निर्भर ही रहा जा सकता है, तथापि उसे नजरअंदाज करना या उसकी उपेक्षा करना भी हमारी दृष्टि से बुद्धिमत्तापूर्ण आचरण नहीं है। बस ***इसीलिए यह कथित धर्म नाम की वस्तु हमारे जीवन में स्थान पाती है।***

धर्म की चर्चा करने वाले, धर्म धारण करने की इच्छा रखने वाले, धर्मात्मा कहलाने के चाहक ***हम सभी लोग न तो यह जानते हैं कि धर्म कहते किसे हैं, धर्म क्या है, न हमने यह सोचा है कि हमें क्यों धर्मात्मा होना चाहिए या धर्म किस प्रकार धारण–पालन किया जाये और कौन ऐसा कर सकता है ?***

संभव है कि धर्म का सच्चा स्वरूप जानने–समझने, धर्मात्माओं के आचरण –व्यवहार की समझ होने और धर्म धारण करने के परिणाम जानने के बाद हममें से अधिकांश लोगों के मन में न तो धर्म के प्रति भय शेष रहे और न ही धर्म की चाहत रहे, क्योंकि ***धर्म वह देता नहीं जिसकी सर्व–साधारण को चाहत है और धर्म जो प्रदान करता है उसकी हमें चाहत नहीं।***

हम सभी निरंतर एक दूसरे को धर्म के मार्ग पर लाने के लिए चिन्तित रहते हैं, पर क्या हम स्वयं भी धर्म के मार्ग पर हैं, क्या हम स्वयं भी धर्मात्मा हैं ? हम धर्म को जानते नहीं हैं, धर्म क्या है हमें मालूम नहीं; बस हमारे अवचेतन में एक धारणा बसी हुई है कि धर्म एक ऐसा कानून है जो हमारे सुख–दुख को नियंत्रित करता है, हमारे कर्मों का लेखाजोखा रखता है, हमारे सत्कर्मों के लिए पुरस्कार और अपराधों के लिए दंड का विधान करता है और मात्र यह जन्म ही नहीं वरन इस जन्म के बाद भी यह धर्म का कानून ही हमें नियंत्रित करता है। ***बस इसीलिए हम धर्म से डरते हैं।***

एक बात और है, उक्त तथाकथित धर्म के कथित अस्तित्व से हम डरते तो अवश्य हैं, पर ***हम उसके अस्तित्व के बारे में सदैव ही सशंकित भी बने रहते हैं, क्योंकि उक्त धर्म की सत्ता का कोई चिन्ह हमें कहीं दिखाई ही नहीं देता है।***

यही कारण है कि न तो हम धर्म को अनदेखा करके उसकी उपेक्षा ही कर पाते हैं और न ही धर्म के प्रति समर्पित ही हो पाते हैं। अनदेखा करने की अवस्था में हम डरते हैं कि कहीं अनजाने ही हम किसी भयंकर दंड के भागी न बन जाएं और समर्पित होने से इसलिए बचते हैं कि क्या पता धर्म और कर्म जैसा कुछ है भी या नहीं, होता भी है या नहीं ? कहीं ऐसा तो नहीं कि हम व्यर्थ ही इससे डरकर अपने मन की करने से वंचित रह जाएं।

बात सिर्फ यहीं तक सीमित नहीं रहती है कि धर्म को हम अपने कर्मों का लेखाजोखा (record) और तदनुसार हमारी नियति (destiny) को तय करने वाला एक तटस्थ (neutral) , स्वचालित नियंत्रक (automatic controller) मानते हैं, बल्कि हमारी कल्पना है कि कोई एक नियंत्रक (administrature controlar) है जो कि हमारे उन कर्मों का लेखाजोखा रखता है और फिर उस रिकॉर्ड के आधार पर हमारी नियति तय करता है, इसप्रकार हमारी कल्पना में उक्त कथित धर्म और हमारे बीच एक एजेन्ट और आ खड़ा होता है ***जिसे हम भगवान कहते (मानते) हैं।***

उस पर तुर्रा यह कि ***हम मानते हैं कि वह नियंत्रक यदि यदि चाहे तो हमारी पूजा–भक्ति से प्रसन्न होकर या मिन्नतों–प्रार्थनाओं से पिघलकर या मन्नतों के प्रलोभन में पड़कर या नास्तिक हो जाने की धमकी से घबराकर हमारे कर्मों के अनुरूप नियत हमारी नियति को बदल भी सकता है।*** इसप्रकार हमें लगता है कि हमारी नियति तय करने वाला मात्र हमारा धर्म और हमारे कर्म ही नहीं वरन एक वह (लेखाजोखा

रखने वाला भगवान) और भी है जिसे संभालना बहुत आवश्यक है। ***हम मानते हैं कि यदि वह चाहे तो हमारी पूजा–भक्ति से प्रसन्न होकर हमारे कुकर्मों को अनदेखा करके हमें दण्डित होने से बचा भी सकता है और हमारे शत्रुओं का नाश करके भी हमें लाभान्वित कर सकता है।***

जब हमारे कर्मों और कर्मफलों के बीच वह भक्ति से प्रसन्न होने वाला और अवहेलना से क्रुद्ध होने वाला, निहाल कर देने या बर्बाद कर देने वाला एजेन्ट (भगवान) प्रवेश कर जाता है ***तब हमारे प्रयासों का जोर बुरे कर्म करने से बचने पर कम और अपने कुकर्मों को माफ करवा लेने के प्रयासों पर अधिक हो जाता है।*** **(क्रमश:)**

कृपया अपना पता हमें पुन: भेज दें – अ.भा.जैन युवा फैडरेशन

देखा गया है कि फैडरेशन के अनेकों सदस्यों/पदाधिकारियों को हमारे द्वारा भेजे गए अवितरित लौट आते हैं। संभवत: कालांतर में उनके पते बदल गए हों या हमारे रिकॉर्ड में उनके पते गलत हों। फैडरेशन के सभी सदस्यों/पदाधिकारियों से निवेदन है कि वे अपने वर्तमान संपर्क हमें सूचित करें ताकि हम अपने रिकॉर्ड्स सही कर सकें।

आप उक्त जानकारी हमें **E-mail / SMS / Whatsapp** भी कर सकते हैं। **E-mail : abjyff@gmail.com;**

SMS / Whatsapp : 09785643202

पता – महामंत्री–अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए–4, बापूनगर, जयपुर–302015

सत्संस्कार जीवन का आधार है

अपने बालकों को वीतराग–विज्ञान पाठशाला में अवश्य लायें

यदि आपके यहाँ वीतराग–विज्ञान पाठशाला नहीं है तो प्रारम्भ करें

हम हर प्रकार के सहयोग के लिए प्रस्तुत हैं

– अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन

महाविद्यालय का पूर्व छात्र पुरस्कृत

युवा एवं खेल मामलात मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा भारतीय विश्वविद्यालय के संघ **(AIV)** के संयोजकत्व में अंतर विश्वविद्यालय युवा महोत्सव में राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात एवं गोवा राज्य के 36 विश्वविद्यालय के प्रतिभागियों में श्री टोडरमल महाविद्यालय के पूर्व छात्र समकित जैन किशनगढ ने वाद–विवाद प्रतियोगिता में तीसरा स्थान प्राप्त किया। इन्हें रजत पदक, प्रमाण पत्र एवं ट्रॉफी से मृदुला सिन्हा (राज्यपाल–गोवा), किरण माहेश्वरी (केबिनेट मंत्री–जल एवं अभियान्त्रिकी विभाग, राजस्थान सरकार), श्रीमती अनिता भदेल (राज्यमंत्री–महिला विकास एवं बाल विभाग, राजस्थान सरकार) तथा भारतीय विश्वविद्यालय संघ के अधिकारियों द्वारा पुरस्कृत किया गया।

(पृष्ठ 7 का शेष...)

इसलिए अपनी गाँठ में कुछ बचाकर रखना। यदि बुढ़ापे में बेटों से कुछ अपेक्षा रखोगे, तो बहुत तकलीफ पाओगे।

इस पर वह कहे कि नहीं, नहीं; मेरे बेटे तो बहुत अच्छे हैं।

अरे भाई! आपके बेटे के अच्छे होने का एक कारण यह भी हो सकता है कि वे बेटे यह जानते हैं कि पिताजी के पास तो सब व्यवस्था है, उनके पास तो मरने के बाद तक की व्यवस्था है और मरने के बाद जो बचा रहेगा, वह हमारे लिए ही तो छोड़ जाएँगे।

इसलिए ही हम कहते हैं कि अपेक्षा नहीं रखना, अपेक्षा रखोगे तो पराधीन हो जाओगे।

अरे भाई ! **अपेक्षा वस्तु में नहीं लगानी है; उसे समझने में लगानी है।** यह तो हमारे ज्ञान और भाषा की कमजोरी है कि अपेक्षा के बिना समझ नहीं पाते हैं।

केवलज्ञानी को सम्पूर्ण ज्ञान होने से अपेक्षा की जरूरत ही नहीं है।

ये अपेक्षायें तो श्रुतज्ञान में लगती हैं, नयों में लगती हैं। इन अपेक्षाओं का निषेध भी नहीं किया जा सकता है; क्योंकि अपेक्षाओं से इंकार करने का तात्पर्य नयों से ही इंकार करना है।

वस्तुस्थिति यह है कि **वस्तु तो पूर्णत: निरपेक्ष है, एक वस्तु दूसरी वस्तु के आधीन नहीं है; किन्तु वस्तुस्वरूप का प्रतिपादन सापेक्ष होता है। हमारी परेशानी यह है कि जब हम प्रतिपादन में अपेक्षा की अनिवार्यता बतलाते हैं तो यह वस्तु को सापेक्ष (पराधीन) मान लेता है तथा जब हम वस्तु को पूर्ण स्वाधीन (निरपेक्ष) समझाते हैं तो अज्ञानीजन प्रतिपादन को निरपेक्ष मान लेते हैं।**

'वाणी सापेक्ष और वस्तु निरपेक्ष' – वस्तुस्थिति यह है।

ये नय मात्र जैनदर्शन में ही हैं, अन्य किसी भी दर्शन में नय नहीं हैं। **(क्रमश:)**

शोक समाचार

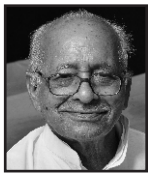

चन्देरी (म.प्र.) निवासी स्व. पण्डित चुन्नीलालजी शास्त्री के द्वितीय सुपुत्र श्री जीवन्धरजी बंसल का 82 वर्ष की आयु में दिनांक 29 अक्टूबर को शांतपरिणामोंपूर्वक देहावसान हो गया।

वे अत्यंत धार्मिक व स्वाध्याय की रुचि वाले थे। जयपुर में आयोजित अनेक शिविरों में आकर तत्त्वज्ञान का लाभ भी लेते थे। आप डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल के साले और और पण्डित शान्तिकुमारजी पाटील के श्वसुर थे। आपकी स्मृति में टोडरमल स्मारक ट्रस्ट हेतु 1100/– रुपये प्राप्त हुये।

दिवंगत आत्मा चतुर्गति के दु:खों से छूटकर शीघ्र ही अनंत अतीन्द्रिय आनंद को प्राप्त हो – यही मंगल भावना है।

दृष्टि का विषय

7 द्वितीय प्रवचन –डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे...)

यदि यह कहा जाये कि भारत को आजादी तो दे देते हैं; लेकिन दस साल के लिए ही आजादी मिलेगी। यदि दस साल में कोई अच्छा काम नहीं किया और कहीं गड़बड़ी हुई तो ग्यारहवें साल उसे हम छीन लेंगे तो ये आजादी काल से खण्डित हो गई।

आजादी उसका नाम नहीं है, जो क्षेत्र से खण्डित हो जाये या जो काल से खण्डित हो जाये।

वैसे ही यदि वस्तु में से काल नामक विभाग निकाल दिया जाये तो वह वस्तु काल से खण्डित हो जायेगी और फिर वह वस्तु ही नहीं रहेगी।

यहाँ दृष्टि के विषय में जो गड़बड़ी की आशंका है, वह यह है कि हमें ऐसा लगता है कि पर्याय के निषेध से काल की अखण्डता खण्डित हो रही है अर्थात् भगवान आत्मा काल से अखण्डित नहीं रह पा रहा है। इसीलिए मैं यहाँ इस बात का प्रतिपादन करने की कोशिश कर रहा हूँ कि **दृष्टि के विषय में पर्यायार्थिकनय की विषयभूत पर्याय नहीं होने पर भी वह वस्तु काल से अखण्डित ही है।**

नयचक्र में जो द्रव्यार्थिक-पर्यायार्थिकनय का प्रकरण मैंने लिखा है, उसमें प्रारंभ के ४-५ पृष्ठ हैं, उनमें इसका विस्तार से वर्णन है। इस बात को समझने के लिए उक्त प्रकरण का अध्ययन गहराई से किया जाना चाहिए।

इसप्रकार जिसमें द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव – ये चार चीजें हों, उसका नाम ही वस्तु है।

१. आत्मा एक वस्तु है, द्रव्य है। २. आत्मा का असंख्यात प्रदेशीपना उसका क्षेत्र है। असंख्यात प्रदेश क्षेत्र नहीं हैं; क्योंकि असंख्यात प्रदेश कहने से असंख्यात का भेद खड़ा हो जाता है, फिर वह एक आत्मा नहीं रहता है। **असंख्यात प्रदेशीपने या असंख्य के अभेद का नाम क्षेत्र है।**

इसीप्रकार ३. अनंत गुणों का अभेद, आत्मा का भाव है। ४. अनादि-अनंतता, आत्मा का काल है।

गुरुदेवश्री अपने प्रवचन में अनेकों बार 'त्रिकाली ध्रुव भगवान आत्मा' कहते थे। वे १. 'त्रिकाली' कहकर काल की अखण्डता, २. असंख्यात प्रदेशी कहकर के क्षेत्र की अखण्डता, ३. अनन्तगुणों का अखण्डपिण्ड कहकर के गुणों की अखण्डता दर्शाते थे। ४. द्रव्यरूप से वस्तु तो अखण्ड है ही। इसप्रकार वे चारों विशेषणों का प्रयोग करते थे। वे सबकुछ भूल सकते थे; लेकिन वे 'त्रिकाली' शब्द अवश्य बोलते थे।

सिक्खों में दो सम्प्रदाय हैं – एक का नाम है **अकाली** और दूसरे का नाम है **निरहंकारी।** 'अकाल' का अर्थ है कि काल का धर्म पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता, उसका नाम है अकाल अर्थात् हम काल से खण्डित होनेवाले नहीं हैं।

निरहंकारी का तात्पर्य यह है कि परद्रव्य में जो एकत्वबुद्धि का अहंकार है, उससे जो रहित हैं, वे निरहंकारी हैं। वे कहते हैं 'मैंने किया' – ऐसा अहंकार नहीं करना, भगवान ही सबकुछ कर्त्ता-धर्ता हैं, इसका नाम निरहंकार है। वे लोग जो आसमानी रंग की पगड़ी बाँधते हैं, वे निरहंकारी लोग हैं और शेष अकालीदल के लोग हैं।

ऐसे ही अपने यहाँ **'अकाल' का अर्थ काल से रहित नहीं है, अकाल का अर्थ है काल की अखण्डता।** 'अकाल' में जो 'अ' है, वह काल का निषेध करनेवाला नहीं है, अपितु **काल के भेद का निषेध करनेवाला है।**

हमारा भगवान आत्मा काल से खण्डित नहीं होता है, क्षेत्र से खण्डित नहीं होता है, भाव से खण्डित नहीं होता है; वह तो अखण्ड द्रव्य है।

अकाल में काल-भेद के निषेध के लिए **'अ'** शब्द है। इसीप्रकार द्रव्य-भेद के निषेध के लिए **अद्रव्य,** गुण-भेद के निषेध के लिए **अगुण** शब्द कहे जा सकते हैं।

कबीर का एक पंथ है – निर्गुण पंथ! वहाँ निर्गुण का अर्थ यह नहीं है कि वे भगवान को गुणों से रहित मानते हैं। वहाँ भी 'निर्गुण' शब्द गुण-भेद के निषेध के लिए आया है। वे तो कहते हैं कि भगवान निराकार है, निरहंकार है, अभेद हैं, सर्व में अर्थात् कण-कण में, जन-जन में व्याप्त हैं। वे यही कहते हैं कि 'सियाराममय सब जग जानी' सम्पूर्ण जगत सीता और राममय है।

इसप्रकार वस्तु काल से खण्डित नहीं होनी चाहिए अर्थात् द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव – ये चार चीजें जिसमें हों, उसी का नाम वस्तु है तथा **वस्तु सामान्य-विशेषात्मक है, भेदाभेदात्मक है, नित्यानित्यात्मक है, एकानेकात्मक है।**

वस्तु, द्रव्य की अपेक्षा सामान्यविशेषात्मक है, काल की अपेक्षा नित्यानित्यात्मक है, भाव की अपेक्षा एकानेकात्मक है तथा क्षेत्र की अपेक्षा भेदाभेदात्मक है। इसप्रकार एक-एक के दो-दो भेद हैं।

१. वस्तु, द्रव्य की अपेक्षा सामान्य भी है और विशेष भी है। २. वस्तु, काल की अपेक्षा नित्य भी है और अनित्य भी है। ३. वस्तु, क्षेत्र की अपेक्षा भेद भी है और अभेद भी है तथा ४. वस्तु, भाव की अपेक्षा एक भी है और अनेक भी है।

इसप्रकार वस्तु की ये आठ विशेषताएँ हैं अर्थात् वस्तु एक भी है, अनेक भी है, नित्य भी है, अनित्य भी है, भेद भी है, अभेद भी है, समान्य भी है और विशेष भी है।

इसप्रकार यह वस्तु प्रमाण की वस्तु है। इसमें से **सामान्य, अभेद, नित्य और एक – ये द्रव्यार्थिकनय के विषय हैं** और विशेष, भेद, अनित्य और अनेक – ये पर्यायार्थिकनय के विषय हैं।

इसलिए सामान्य, अभेद, नित्य और एक – इनकी **द्रव्य संज्ञा** है और विशेष, भेद, अनित्य और अनेक – इनकी **पर्याय संज्ञा** है।

ये विशेष, भेद, अनित्य और अनेक – चारों ही दृष्टि के विषय में शामिल नहीं हैं।

सामान्य, अभेद, नित्य और एक – ये द्रव्यार्थिकनय के विषय हैं। वस्तु तो एक है; लेकिन उसकी ये चार विशेषताएँ हैं। ये चार होने से भेद हो गया; इसलिए ये 'चारपना' तो पर्यायार्थिकनय का विषय है।

इन चारों का अभेद द्रव्यार्थिकनय का विषय है, वही दृष्टि का विषय है और उसमें उपरोक्त पर्याय शामिल नहीं है।

इस दृष्टि के विषय में वे पर्यायार्थिकनय की विषयवस्तु के वे चार अंश शामिल नहीं हैं, जिनकी पर्याय संज्ञा है तथा **वे चार अंश शामिल हैं, जिनकी द्रव्य संज्ञा है; परन्तु उनका भी भेद दृष्टि के विषय में शामिल नहीं है। इसी का नाम है – पर्याय से रहित दृष्टि का विषय।**

तृतीय प्रवचन

समयसार परमागम की छठवीं-सातवीं गाथा की विषय-वस्तु पर चर्चा चल रही है। दृष्टि के विषय में जो पर्याय शामिल नहीं है, उस पर्याय शब्द का वास्तविक अर्थ हम पूर्व में जान चुके हैं कि **पर्यायार्थिकनय का विषय; भेद, विशेष, अनित्य और अनेक हैं। और इन चारों की ही पर्याय संज्ञा है।**

यह तो पहले ही कह चुके हैं कि **सामान्य, एक, अभेद और नित्य – यह दृष्टि का विषय है और विशेष, भेद, अनेक और अनित्य – ये चारों पर्याय होने से दृष्टि के विषय में शामिल नहीं है।**

यहाँ प्रश्न यह है कि यहाँ दृष्टि के विषय में विशेष को पर्याय कहकर शामिल नहीं किया; जबकि ७३वीं गाथा में सामान्य-विशेषात्मक द्रव्य को दृष्टि का विषय बताया है।

इसका उत्तर इसप्रकार है कि ७३वीं गाथा में **सामान्य का अर्थ दर्शन गुण एवं विशेष का अर्थ ज्ञानगुण लिया है।**

यद्यपि ज्ञान और दर्शनगुण बिल्कुल एक से हैं, बराबरी की हैसियत के हैं, दोनों का उल्लेख भी एक साथ ही मिलता है; तथापि दर्शनगुण को सामान्य कहा जाता है और ज्ञानगुण को विशेष।

अतः वहाँ **सामान्य–विशेषात्मक द्रव्य का अर्थ ज्ञान–दर्शन स्वभावी भगवान आत्मा ही है।**

यहाँ जिस सामान्य-विशेषात्मक द्रव्य को दृष्टि का विषय कहा है, वह सामान्य-विशेषात्मक न तो 'परीक्षामुख' में समागत सामान्य-विशेष है और न द्रव्य का सामान्य-विशेषात्मक अंश वाला (द्रव्यांश वाला) सामान्य-विशेषात्मक है। **यहाँ दर्शन गुण के अर्थ में सामान्य और ज्ञान गुण के अर्थ में विशेष शब्द का प्रयोग किया है।**

इसप्रकार सामान्य-विशेष को भी विभिन्न अपेक्षाओं से कहा जाता है। यदि हम वे सारी अपेक्षाएँ नहीं समझेंगे, तो कहीं भी भ्रमित होना संभव है।

जिसप्रकार चालक तेज गति से वाहन चला रहा हो और एकाएक सामने कुछ आ जाय, तो चालक अवरोधक (ब्रेक) का प्रयोग करता है, तब चालक तो अपने आपको सँभाल लेता है; किन्तु पीछे जो मालिक बैठे होते हैं, वे अपने आपको नहीं सँभाल पाते।

यदि वह चालक अवरोधक (ब्रेक) का प्रयोग नहीं करता तो क्या होता ? इसकी कल्पना की जा सकती है। एक बहुत बड़ी दुर्घटना हो सकती थी।

इस कारण यदि वे मालिक सोचे कि वाहन में से अवरोधक (ब्रेक) ही निकलवा देते हैं, जिससे न रहेगा बाँस और न बजेगी बाँसुरी; परन्तु उन्हें यह पता नहीं है कि अवरोधक (ब्रेक) के बिना वाहन की क्या हालत होगी?

अवरोधक (ब्रेक) के समान ही जैनदर्शन में अपेक्षायें हैं।

जिसप्रकार तेज गति के वाहन में से ब्रेक नहीं निकाला जा सकता; उसीप्रकार जैनदर्शन के प्रतिपादन में से अपेक्षाओं को निकालना संभव नहीं है।

जो यह कहते हैं कि अपेक्षा से बात ढीली हो जाती है; अतः अपेक्षा ही समाप्त कर दो। तो उनका अपेक्षा को खत्म करने का निर्णय वाहन में से अवरोधक (ब्रेक) को निकालने के समान है।

जिसप्रकार बिना ब्रेक के किसी वाहन की कल्पना नहीं की जा सकती है; उसीप्रकार बिना अपेक्षा के वस्तुस्वरूप समझना संभव नहीं है।

अरे भाई ! जो अन्दर में निरपेक्ष तत्त्व है, उसे अपेक्षाओं से ही समझा जा सकता है। निरपेक्ष का अर्थ है कि जिन अपेक्षाओं से उस तत्त्व को समझाया जाता है, वह तत्त्व उन अपेक्षाओं से भी निरपेक्ष है, रहित है।

इसे हम इस तरह समझ सकते हैं कि जैसे हम किसी से कहें कि बुढ़ापे में किसी से कुछ अपेक्षा (आशा, भरोसा) मत रखना;

(शेष पृष्ठ 5 पर ...)

2 दिसम्बर 2014, मूल्य : 2/- आर. एन. आई. 31109/77 RJ / J. PC / FN-32 / 2012-14

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी के संबंध में उनके समकालीन मनीषियों द्वारा व्यक्त किये गये हृदयोद्‌गार –

जैन समाज के गौरव, लब्ध-प्रतिष्ठ व्रती विद्वान **पण्डित जगन्मोहनलालजी शास्त्री,** कटनी ने आध्यात्मिकसत्पुरुष श्रीकानजीस्वामी से प्रभावित होकर उनके प्रति अपनी आस्था व्यक्त करते हुए लिखा है –

''....जब से श्री कानजीस्वामी ने भगवान कुन्दकुन्दाचार्य के समयसार आदि अध्यात्म ग्रन्थों का परिशीलन कर जैनधर्म का यथार्थ मर्म समझा और अपने अनुयायी हजारों भाई-बहिनों को समझाय तब से दिगम्बर जैन समाज की प्रगति में एक नया मोड़ आया है।

स्वामीजी ने अपने जीवन में वह कार्य कियाहै जो आज सहस्रों वर्षों से जैन साधकों द्वारा सम्पन्न नहीं हो सका।...सौराष्ट्र में 20 दिगम्बर जैन मन्दिरों का निर्माण, उनकी पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएँ, समस्त दिगम्बर जैनतीर्थों की सहस्रों व्यक्तियों के संघ सहित वन्दना, लाखों रुपये दिगम्बर तीर्थरक्षा में चन्दा देना तथा उसकी पूर्ति का संकल्प - ये सब उनकी कट्टर दिगम्बरता के दृढतम प्रमाण हैं।

स्वामीजी अत्यन्त सरल, निष्कपट, सहजस्नेही, हँसमुख, ओजस्वी व्यक्ति हैं। अध्यात्म के उच्चतम विद्वान हैं। अध्यात्म का जीवनचर्या पर प्रभाव लक्षित होता है।

उनके अनुयायी अधिकांश व्यक्ति रात्रि भोजन नहीं करते, कन्दमूल भक्षण नहीं करते, द्विदल नहीं खाते, व्रतरूप प्रतिज्ञाबद्ध न होते हुए इन श्रावकीय नियमों का पालन करते हैं; जबकि पुराने दिगम्बरों में यह परम्परा टूटती जा रही है।

मेरी स्वयं की दृष्टि में यह निर्णय है कि स्वामीजी का तत्त्वज्ञान यथार्थ है....।

हमने स्वामीजी को नजदीक से देखा है, परखा है और उनके प्रवचनों को तथा अनुभवों को सुना है। हमें विश्वास है कि वे दिगम्बर जिनागम के कट्टर श्रद्धानी हैं। ....स्वामीजी प्रतिज्ञारूप प्रतिमा आदि नहीं पालते तथापि उनके आचरण खान-पान आदि किसी प्रतिमाधारी से कम नहीं हैं। उत्तम आचरण, मर्यादित खान-पान, आजीवन ब्रह्मचर्य, मन्दकषाय आदि गुण उनमें और उनके शिष्यों में पाये जाते हैं।''

टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धांत महाविद्यालय के स्नातक –

डॉ. ऋषभ शास्त्री पुरस्कृत

रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय जबलपुर (म.प्र.) के तत्त्वावधान में आयोजित अखिल भारतीय दर्शन परिषद् के 59वें अधिवेशन में श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक डॉ. ऋषभजी शास्त्री ललितपुर द्वारा **'विश्वतत्त्व प्रकाश के आलोक में चार्वाक सम्मत जीव विचार की समीक्षा'** शीर्षक से प्रस्तुत आलेख को तत्त्वमीमांसा विभाग में युवा वर्ग द्वारा प्रस्तुत सर्वश्रेष्ठ आलेख घोषित कर उन्हें 'डॉ. विजयश्री स्मृति युवा पुरस्कार' से पुरस्कृत किया गया।

प्रवेश फार्म शीघ्र भेजें

श्री वीतराग-विज्ञान विद्यापीठ परीक्षा बोर्ड ए-4, बापूनगर, जयपुर 302015 (राज.) की शीतकालीन परीक्षायें दिनांक 25, 26 व 27 जनवरी 2015 को आयोजित की जावेगी।

जिन परीक्षा केन्द्रों ने छात्र प्रवेशफार्म भरकर अभी तक नहीं भेजे हैं, वे तत्काल परीक्षाबोर्ड कार्यालय को भेज देवें। **– ओ.पी. आचार्य**

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

1 से 3 दिसम्बर 2014	उदयपुर (राज.)	वेदी प्रतिष्ठा
4 दिसम्बर 2014	उदयपुर विश्वविद्यालय में भाषण	
1 से 7 जनवरी 2015	नागपुर (महा.)	पंचकल्याणक
15 फरवरी 2015	हस्तिनापुर	शिलान्यास
20 से 22 फर.2015	जयपुर (राज.)	वार्षिकोत्सव
1 से 6 अप्रैल 2015	विदिशा (म.प्र.)	पंचकल्याणक
17 से 23 मई 2015	पारले (मुम्बई)	पंचकल्याणक
24 मई से 10 जून 2015	मेरठ	प्रशिक्षण-शिविर

प्रकाशन तिथि : 28 नवम्बर 2014

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
सह-सम्पादक : **डॉ.संजीवकुमार गोधा,** एम.ए.द्वय, नेट, एम.फिल (जैनदर्शन), पीएच.डी. एवं **पण्डित परमात्मप्रकाश भारिल्ल**
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए रेनबो ऑफसेट प्रिण्टर्स, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, श्री टोडरमल स्मारक भवन, ए-४, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो निम्न पते पर भेजें –
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
E-Mail : ptstjaipur@yahoo.com **फैक्स :** (0141) 2704127